P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-2* ISSUE-8* November- 2017
E: ISSN NO.: 2455-0817 Remarking An Analisation

# राष्ट्रीय एकता के आधार–रूप में हिन्दी सदैव प्रासंगिक है

**सुरेन्द्र डी. सोनी**
एसोसिएट प्रोफेसर,
इतिहास विभाग,
राजकीय लोहिया स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
चूरू, राजस्थान

**सारांश**

'राष्ट्र' एक ऐसा शब्द है, जो 'देश' या 'राज्य' से कहीं अधिक हमें हमारी सांस्कृतिक पहचान देता है। यह पहचान ही हमें 'राष्ट्रीयता' की महिमा से मंडित करती है। यह 'राष्ट्रीयता' बिना किसी भाषायी आधार के नहीं हो सकती। भारतीयों अथवा हिंदुस्तानियों को हिन्दी सहज ही यह आधार प्रदान करती है। अँगरेज़ों के भारत में आने व इससे पहले के कालखण्ड में खड़ी बोली से वर्तमान स्वरूप में आने तक हिन्दी ने भारत को सांस्कृतिक रूप से इतनी सहजता और सरलता से जोड़ा कि यह देश उसी के बल पर संघर्ष करके सम्प्रभु हुआ। प्रस्तुत पत्र में यही दर्शाने का प्रयास किया गया है कि असल में जिसे 'राष्ट्र' कहते हैं, उसे 'राष्ट्र' बनाने में हिन्दी का बहुत बड़ा योगदान है।

**मुख्य शब्द** : आत्म–उत्खनन, आत्म–अन्वेषण, आत्मलिप्तता, आत्म–परिपूर्णता, राज्य, देश, राष्ट्र, प्रांजलता, भारत, हिंदुस्तान, सार्क।

**प्रस्तावना**

कन्दराओं से निकलकर सभ्यता के तथाकथित 'सुन्दर' लक्ष्यों को हासिल करने और इतिहास के सुदीर्घ अन्तर्विरोधों में तपकर भी आज का मनुष्य यह दावा नहीं कर सकता कि वह 'पूर्ण' हो गया है। उसका रचाव–बसाव अभी जारी है। वह स्वयं यह कहने की स्थिति में नहीं आया है और आ भी नहीं सकता कि 'संभावना' शब्द को शब्दकोश से अब हटा देना चाहिए। इस धरती पर 'श्रेष्ठ' से 'श्रेष्ठतर' होने की दिशा में अग्रसर यदि कोई है, तो वह मनुष्य ही है और ऐसा करने के लिए उसके समक्ष भाषा से अच्छा कोई विकल्प नहीं है। निर्मल वर्मा कहते हैं –'पशु और देवदूत के बीच मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है, जो अपने को अजीब अधूरेपन की अवस्था में पाता है, उसमें न पशु की आत्मलिप्तता है, न देवदूत की आत्म–परिपूर्णता। इतिहास के चौखटे में मनुष्य की आकृति कुछ वैसी ही अपूर्ण और अनगढ़ी दिखाई देती है, जिसके कुछ रंग समय ने धुँधला दिए हैं, कुछ रेखाएँ अब भी कोई आकार पाने की प्रतीक्षा में ठिठकी रह गई हैं। मनुष्य की 'सम्पूर्ण छवि', यदि ऐसी कोई चीज़ है, तो कहीं बाहर न होकर स्वयं उसके भीतर दबी है। मनुष्य अपने को पाने के लिए स्वयं अपने को उत्खनित करता है, स्वयं अपने को अपनी कब्र से उठाता है। ...आत्म–उत्खनन अथवा आत्म–अन्वेषण का सबसे सक्षम आयुध भाषा है। भाषा मनुष्य की देह का अदृश्य अंग है, जो उसे आत्मदृष्टि देता है।' मनुष्य द्वारा स्वयं मनुष्य की खोज करना कोई एकाकी उद्यम नहीं होता है। यह सामूहिक प्रयास होता है। मनुष्य का किसी समूह–विशेष के रूप में, दूसरे समूहों से अलग, स्वयं को परिभाषित करने का स्वभाव उसे 'सामान्य' से 'विशिष्ट' बना देता है। वैशिष्टय की यह चाहना, औरों से खुद के अलग और श्रेष्ठ सिद्ध होने की ललक उसे किसी न किसी भौगोलिक इकाई के प्रति निष्ठावान बना देती है। मनुष्य की इस निष्ठा का सामूहिक किंतु भावात्मक रूपान्तरण कभी सभ्यता के मूर्त और कभी संस्कृति के अमूर्त प्रत्यय में होता है। सभ्यता और संस्कृति का यह स्वरूप 'राज्य', 'देश' अथवा 'राष्ट्र' के रूप में एक नाम, एक पहचान ग्रहण करता है। इस नाम, पहचान के लिए मनुष्य सहज रूप में कुछ जरूरी प्रतीक रच या गढ़ लेता है, जैसे ध्वज, गान, वेश, भाषा आदि। इनमें से भाषा बहुत ज़रूरी प्रतीक है।

**'राष्ट्र' की जीवंत अभिव्यक्ति है भाषा**

प्रतीकों का महत्व यह है कि वे किसी 'राज्य', 'देश' अथवा 'राष्ट्र' की एकता बनाए रखते हैं। देखा जाता है कि ये प्रतीक अपने सामान्य अर्थ को स्वयं में विलीन करके 'प्रतीक' से बढ़कर मनुष्य के 'आत्मिक सौंदर्य के अधिष्ठान' हो जाते हैं। 'भाषा' भी ऐसा ही एक अधिष्ठान है। भाषा से किसी सभ्यता और संस्कृति को एक सुन्दर, हृदयस्पर्शी और जीवंत पहचान प्राप्त होती है। जब तक मनुष्य आत्म–उत्खनन अथवा आत्म–अन्वेषण करता रहेगा, 'संभावना' शब्द उसके कोश को गरिमा प्रदान करता रहेगा, जब तक उसके कल्पना–लोक में विमर्श के

समुज्ज्वल तारे जगमगाते रहेंगे और स्वयं को अभिव्यक्त करने के लिए वह एक सुंदर, हृदयस्पर्शी व जीवंत माध्यम रचता–गढ़ता रहेगा, तब तक उसे भाषा की जरूरत पड़ती रहेगी। इसी तर्ज पर कहा जा सकता है कि हमारे 'राष्ट्र' को अपनी जीवनी शक्ति जुटाने के लिए एक प्रतीक, एक भाषा के रूप में 'हिन्दी' की आवश्यकता पड़ती रहेगी क्योंकि यह हिन्दी है, जिसके कारण संसार हमें एक 'राष्ट्र' 'हिंदुस्तान' के रूप में जानता है।

**राष्ट्रीयता की प्रतीक हिन्दी**

हिन्दी ने निश्चय ही इस 'राष्ट्र' के एकात्म बनाए रखने में और इसकी गत्यात्मकता को जीवित रखने में महान् भूमिका निभाई है। 'राष्ट्र' एक ऐसा प्रत्यय है, जो हमें 'देश' और 'राज्य' के प्रत्ययों की तुलना में अधिक समृद्ध बनाता है। 'देश' की एक भौगोलिक सीमा होती है, लेकिन 'राष्ट्र' इस सीमा से परे अखण्डता के अमूर्त प्रत्यय को जन्म देता है। हिन्दी इस अखण्डता का अत्यंत भावपूर्ण प्रतीक है। हिन्दी यदि 'राष्ट्र' की एकता की प्रतीक है, तो वह 'देश' और 'राज्य' की एकता की प्रतीक भी है। आम भारतीय के हृदय में पल रहे एकात्म भाव, उसकी अतिशय भावुकता को गहराई से समझने के लिए हमें हिन्दीमय होना ही होगा। राष्ट्रीयता की अपनी एक नैसर्गिक शक्ति होती है। प्रतीक 'राष्ट्र' के लोगों को आपस में जोड़ते हैं। हिन्दी राष्ट्रीय एकता की प्रतीक है, इसीलिए यह अभ्यास चलन में आया हुआ है कि देश के सभी राज्यों में लोग हिन्दी में गतिमान न होते हुए भी हिन्दी बोलना चाहते हैं। अंतर्राज्यीय पर्यटन तो चल ही हिन्दी के बल पर रहा है। देश ही नहीं, देश के बाहर भी हिन्दी सभी भारतीयों को जोड़ती है। दुनिया का कोई देश ऐसा नहीं है, जहाँ हिन्दी का महत्व स्वीकार नहीं किया जा रहा हो। हाँ, शुद्ध या अकादमिक हिन्दी बोलने–लिखने का अभ्यास हर किसी के वश का नहीं है, लेकिन इससे हिन्दी की लोकप्रियता के बढ़ने पर कोई असर नहीं पड़ा है। हमारे 'राष्ट्र' भारत का आम आदमी हिन्दी की महिमा से पूर्णतया मंडित है और वह उसका कंठहार बनकर सुशोभित हो रही है। यहाँ ''राष्ट्र'' शब्द का प्रयोग इसीलिए किया गया है कि यह 'राज्य' और 'देश' से बढ़कर अभिव्यक्त होता है। कुछ ही 'राज्य' ऐसे होते, जहाँ व्यापक स्तर पर हिन्दी बोली–समझी जाती, तो कहा जा सकता था कि यह देश के कुछ राज्यों की ही भाषा है। 'राज्य' से इतर 'देश' होने का अर्थ संप्रभु होना है। राज्य देश में निहित होते हैं, लेकिन देश किसी में निहित नहीं हो सकता। देश की एक स्थायी आबादी होती है, उसका सुपरिभाषित भौगोलिक क्षेत्र होता है, एक सरकार होती है और दूसरे देशों से संबंध बनाने की उसकी क्षमता होती है। यदि कोई दूसरा देश उसे मान्यता नहीं देता है, तो भी वह होता है। सामान्य रूप से ''राष्ट्र'' लोगों के उस समूह के लिए प्रयुक्त होने वाला शब्द है, जिसमें वे अपनी संस्कृति, भाषा, रीति–रिवाज, धर्म और इतिहास के वैशिष्ट्य को देखते हुए, आदर और ममत्व के भाव से, परस्पर संबद्ध होते हैं। 'राष्ट्र' को हमें विशिष्ट रूप से समझना होगा। हमारे धर्म–शास्त्रों में यहाँ तक कहा गया है कि जिस प्रदेश के लोग आपस में किसी विशिष्ट भाषा में संवाद करते हों, वह एक 'राष्ट्र' है। इस दृष्टि से यह मानने में कोई असुविधा नहीं होनी चाहिए कि हिन्दी भारत की राष्ट्रीय प्रतीक है। यह 'राष्ट्र' के प्रमुख तत्वों जैसे भूगोल, जाति, धर्म, संस्कृति, अर्थ और सत्ता सभी को जोड़ती है। 'राष्ट्र' की चाहना एक उदात्त भावना है। 'यजुर्वेद' में 'राष्ट्रं मे देहि' और 'अथर्ववेद' में 'त्वा राष्ट्र भृत्याय' कहा गया है। 'राष्ट्रीयता' की भावना से मानव– समुदाय में एकत्व की अन्तर्धारा प्रवाहित होती है। इस अन्तर्धारा को प्रतिबिम्बित करने के लिए 'भाषा' एक सशक्त प्रतिमान होती है। इस दृष्टि से 'भारत' में हिन्दी राष्ट्रीयता का सशक्त एक प्रतिमान है।

**हिन्दी से है राष्ट्रीय एकता**

हिन्दी को यदि हम 'राष्ट्र' की भाषा न कहकर किसी राज्य या प्रदेश की भाषा कहेंगे, तो वह संविधान से निबद्ध होगी। हिन्दी राष्ट्रीय एकता की प्रतीक है, इसलिए उसे कोई संविधान शासित नहीं कर सकता। ऐसा होता, तो वही अनिष्ट होता, जो अंग्रेज़ी को थोपने से हुआ। हिन्दी को यदि हम केवल 'देश' की भाषा कहेंगे, तो वह एक निश्चित आबादी, निश्चित भौगोलिक सीमा और दूसरे देशों से केवल सरकारी संवाद बनाने तक ही सीमित होकर रह जाएगी। यह वैसा ही होगा, जैसा किसी नदी के सहज प्रवाह को रोककर उस पर बाँध बना देना। ऐसा करते समय हमें नहीं भूलना चाहिए कि नदी अपना मार्ग स्वयं तय करती है। वह जिधर–जिधर जाती है – अपनी अस्मिता, अपनी गरिमा और अपनी संभावनाएँ साथ लेकर जाती है। भाषा भी इसी तरह अपने संस्कार, अपने ओज और अपनी गत्यात्मकता के साथ आगे बढ़ती है। वह एकता का मंत्र साथ लेकर चलती है। उसे बोलने वाले लोग राज्य और देश की सीमा से आगे बढ़कर उसकी प्रांजलता के माध्यम से अपने राष्ट्रीय वैभव को आप्लावित करते रहते हैं। हिन्दी को पूरे विश्व में जो सम्मान प्राप्त है, वह उसकी प्रांजलता के कारण ही है। उसका देश और राज्यों की सीमाओं में स्वीकार है, इसीलिए उसका 'राष्ट्र' में सम्मान है। किसी भाषा के 'राष्ट्रीय' होने का अर्थ उसके देश और राज्यों के भीतर और बाहर समान रूप से ऐश्वर्यशाली होने से है। कहने का आशय यह है कि हिन्दी किसी प्रदेश या देश से बँधकर 'हिन्दी' नहीं बनी है। वह तो अपनी प्रांजलता, परिवर्तन के प्रति उदारता के भाव तथा अपनी अन्तर्निहित गतिमानता के कारण 'हिन्दी' है और इसीलिए वह 'राष्ट्रीय' भी है। तमिलनाडु का कोई टैक्सीवाला, कश्मीर का कोई शिकारेवाला अथवा राजस्थान का कोई ग्रामीण आगंतुक पर्यटक से जब हिन्दी में संवाद करता है, भले ही वह व्याकरण की दृष्टि से अशुद्ध हो, तो हिन्दी की राष्ट्रीयता, उसकी एकात्मकता दिग्दर्शित हो जाती है। हिन्दी–सिनेमा के गीत और संवाद महासागरों को पार करके वहाँ रहने वाले भारतीय मूल के लोगों को सहज ही याद हो जाते हैं और वे उनका अपने दैनंदिन जीवन में भरपूर उपयोग करते हैं। हिन्दी सिनेमा के गीतों और संवादों से प्रभावित वे लोग नागरिकता की दृष्टि से 'अमेरिकी' या 'ब्रिटिश' हो सकते हैं, लेकिन 'राष्ट्रीयता' की दृष्टि से वे पक्के भारतीय ही हैं। 'हिन्दी' का यह सार्वभौमिक स्वरूप केवल सरकारी प्रयास का प्रतिफल ही नहीं हो सकता।

हिन्दी पूरी दुनिया के भारतीयों को सांस्कृतिक दृष्टि से जोड़े रखती है।

**अंग्रेंजो का षड़्यंत्र और हिन्दी की शक्ति**

हम जानते हैं कि अंग्रेंजो के शासनकाल में हिन्दी को नष्ट करने के कितने सरकारी प्रयास हुए – लेकिन अपनी अंतर्निहित शक्ति के कारण हिन्दी हमारे 'राष्ट्र' की एकता की प्रतीक बनी रही। फ़ादर कामिल बुल्के का कथन इस तथ्य की पुष्टि करता है – ' अंग्रेंजो ने सायास हिन्दी का प्रचार नहीं होने दिया, क्योंकि वे जानते थे कि इस भाषा के प्रचार से लोगों के बीच एकता बनी रहेगी।' बुल्के जिस एकता की बात करते हैं, वह राष्ट्रीय एकता ही है। अंग्रेंजो को इस बात का भय था कि जिन लोगों को वे इस देश में अंग्रेंजी सिखाकर अपने मित्रों के रूप में प्रशिक्षित कर रहे हैं, वे हिन्दी की राष्ट्रीय अन्तश्चेतना के ज्वार में उनका साथ न छोड़ दें, इसीलिए उन्होंने हिन्दी को अपना निशाना बनाया। निश्चय ही अंग्रेंजो के प्रभाव से बड़ी संख्या में भारतीयों का अँगरेज़ी से मोह स्थापित हुआ, लेकिन यह भी सत्य है कि हिन्दी की अन्तर्निहित क्षमता के कारण एक सहज राष्ट्र–बोध भी उपजा। हिन्दी के कारण अहिन्दीभाषियों ने भी साम्राज्यवाद का विरोध करना सीख लिया। स्वामी दयानन्द सरस्वती जैसे सुधारक हिन्दी के बूते ही भारतीयों को वेदों की ओर लौटाने का संकल्प कर सके और इसी बूते महात्मा गांधी विविधता से भरे इस देश में स्वतंत्रता की आवाज़ लगा सके। 1931 में उन्होंने कहा, 'यदि स्वराज्य अँगरेज़ी पढ़े हुए भारतवासियों का है और केवल उनके लिए ही है, तो सम्पर्क – भाषा अवश्य अंग्रेंजी होगी। यदि वह करोड़ों भूखे लोगों, करोड़ों निरक्षर लोगों, निरक्षर स्त्रियों और सताए हुए अछूतों के लिए है, तो देश की सम्पर्क भाषा केवल हिन्दी हो सकती है।' यह कदापि नहीं कहा जा सकता कि स्वामी दयानन्द सरस्वती और महात्मा गांधी की तपस्या केवल भारत की सीमा में रहने वाले भारतीयों के लिए थी। यह तपस्या उन भारतीयों के लिए थी, जो पूरे संसार में कहीं भी रहते थे, लेकिन उनके हृदय भारत की अविभाज्य सांस्कृतिक पहिचान के लिए धड़कते थे। यही कारण है कि भारत की राजनैतिक सीमा से बाहर रहकर भारत की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रहे आन्दोलनकारियों ने 'वन्दे मातरम्' और 'भारत माता की जय' का ही उद्घोष किया और इन उद्घोषों का न तो भारत की स्थानीय भाषाओं में अनुवाद किया और न ही उन लोगों की भाषा में, जो उन पर शासन कर रहे थे। अंग्रेजों ने भी 'वन्दे मातरम्' को 'वन्दे मातरम्' और 'भारत माता की जय' को 'भारत माता की जय' ही समझा। 1942 का 'भारत छोड़ो' अंग्रेजों को 'क्विट इण्डिया' से कहीं अधिक समझ में आया। इसका कारण 'हिन्दी' में छुपा राष्ट्रीयता का तत्व ही था, अन्यथा खण्ड–खण्ड भारत में अन्याय का प्रतिकार करने के लिए गूँजने वाले समवेत स्वरों का अकाल ही पड़ जाता। स्पष्ट है कि हिन्दी भारत की राष्ट्रीयता का जीवन्त प्रतीक है।

**राष्ट्रीय एकता और हिन्दी की तरलता**

हमें स्वीकार करना होगा कि वह हिन्दी, जिसमें करोड़ों भारतीय अपना सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और सब मिलाकर सांस्कृतिक व्यवहार करते हैं, अन्य भाषाओं और बोलियों के ही अनुरूप, अगर उर्दू और फ़ारसी के शब्दों को भी, आत्मसात करके आम भारतीय की भाषा अथवा बोली बनती है, तो भी वह हिन्दी ही रहती है। यही कारण है कि वह हमारी एकता की बुनियाद है। चाहे कोई 'वंदे मातरम्' कहे, 'जय हिंद' कहे, 'इंक़लाब ज़िंदाबाद' कहे, कहता वह 'हिन्दी' में ही है। हिन्दी ही वह भाषा है, जिसकी तरलता लोगों को बार–बार शब्दकोश खोलकर देखने के लिए विवश नहीं करती। हिन्दी हर भाषा को आत्मसात करती है। हिन्दी को संस्कृत निष्ठता के प्रति कोई विशेष आग्रह नहीं है। वह अन्य भाषाओं का तिरस्कार नहीं करती। यहाँ तक कि वह अंगेंजी के शब्दों को भी स्वीकार कर लेती है, जिसे भारत में हिन्दी का विरोधी समझा जाता है। आत्मसातीकरण का यह गुण ही उसे 'हिन्दी' बनाता है। यह गुण हिन्दी की महिमा बढ़ाता ही है। हिन्दी का किसी अन्य भाषा से विरोध है ही नहीं..! हिन्दी का संस्कार किसी प्रकार के विरोध पर आधारित नहीं है, यही उसकी ऊर्जा है। विरोध पर चलने वाली भाषाओं को इतिहास विस्मृत कर देता है। जैसे अँगरेज़ी भारत में हिन्दी के विरोध का ध्वज लेकर खड़ी हुई, तो वह देश के स्तर पर ही टिकी रही, 'राष्ट्र' को उसने जाना ही नहीं! वह सरकारी कामकाज की अधिष्ठात्री भाषा बनी और अब भी बनी हुई है, लेकिन 'राष्ट्रीयता' की दृष्टि से भारत को एक सूत्र में बाँधने वाली भाषाओं का जब इतिहास लिखा जाएगा, तब उसमें अंगेंजी कहीं नहीं होगी।

**हिन्दी है हमारी साझा भाषा**

जब 'राष्ट्र' की प्रतीक के रूप में हिन्दी को हृदय से स्वीकार किया जाता है, तो निश्चय ही 'हिन्दी' और 'राष्ट्र' दोनों ही मनसा–वाचा–कर्मणा भारतीयता के महान् आदर्शों का प्रतिनिधित्व करते हैं।'राष्ट्र' का आदर्श विश्वजनीन है। जब फ्रांसीसी विचारक अंर्स्ट रेनान ने 1882 ई. में एक लेख, 'राष्ट्र क्या है..' प्रस्तुत किया, तब उन्होंने यह नहीं सोचा होगा कि कभी उनके द्वारा दिए गए 'राष्ट्र' के विचार को विश्व का प्रबुद्ध समुदाय इतनी सहजता से स्वीकार कर लेगा। रेनान ने कहा कि 'राष्ट्र' एक आत्मा, एक आध्यात्मिक सिद्धान्त है। स्मृतियों की समृद्ध धरोहर पर साझा अधिकार और साथ रहने की कामना 'राष्ट्र' को अभिव्यक्त करती है। यदि 'राष्ट्र' एक आत्मा है, तो उसके अतीत की स्मृति और वर्तमान का साहचर्य–भाव बिना किसी साझा भाषा के आ नहीं सकता। यह साझा भाषा, भारत के संदर्भ में, हिन्दी और केवल हिन्दी है। उसका समृद्ध भाषा–परिवार देश में प्रयुक्त हो रही सभी भाषाओं को स्वयं में न केवल समाहित किए हुए है, अपितु वह उसका संरक्षण भी करता है। हिन्दी की सरसता और सार्वजनीनता के कारण वह हमारे 'राष्ट्र' की महान् प्रतीक है।

**निष्कर्ष**

भारतीय भाषा–परिवार की किसी भी भाषा को प्रयुक्त करने वाला कोई भी भारतीय, चाहे वह बाज़ारीकरण के इस युग में विश्व के किसी भी भाग में रह रहा हो, वह हिन्दी के वैभव को बढ़ाने वाला ही सिद्ध हो रहा है। इस दृष्टि से भारत के किसी भी राज्य की देश के प्रति संवैधानिक बद्धता और साथ ही इस देश के राजनैतिक

सीमांकन से ऊपर यहाँ के सांस्कृतिक प्रतीक बड़े ही वैभव से अपने स्थान पर अवस्थित हैं, जिनमें से हिन्दी, एकता की भाषा के रूप में, अत्यधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि भारत 'राष्ट्र' को एकात्मता का आदर्श इसी ने दिया है। इसके प्रतिफल में हिन्दी को 'हिन्दुस्तानी' भी कह दिया जाए तो आपत्ति नहीं होनी चाहिए। यह तय है कि भविष्य में 'सार्क' संगठन के भारत, पाकिस्तान, बंगलादेश, नेपाल, मालदीव, श्रीलंका, भूटान और अफ़गानिस्तान देश परस्पर सहयोग और सामूहिक सुरक्षा की भावना से जब और अधिक निकट आएँगे, तो यह 'हिन्दी' ही होगी, जो इनकी भौगोलिक सीमाओं को क्षीण कर देगी। इसलिए दूरदर्शिता इसी में है कि हम 'राजभाषा' और 'राजकीय अनुकम्पा से युक्त भाषा' के रूप में हिन्दी की स्थापना करने के प्रयासों को केवल राजनैतिक रूप में ही देखें। सांस्कृतिक दृष्टि से 'राष्ट्र' और उसकी एक भाषा के सहज विकास में हिन्दी के किसी अन्य भाषा से संघर्ष की कोई संभावना नहीं नहीं है। यही कारण है कि हिन्दी हमारी राष्ट्रीय एकता की जीवनी–शक्ति है। हमारा कर्तव्य है कि हम हमारी भाषा का सौंदर्य, उसका शील, उसकी पवित्रता बनाए रखें। कविता की पुस्तक 'मैं एक हरिण और तुम इंसान' के रचनाकार की अपेक्षा है कि कहीं भाषा हमारा औज़ार न बन जाए। 'हर हिंसा में/चाहे वह जिह्वा से निकली कोई गाली हो/या काग़ज़ पर छपी युद्ध की कोई घोषणा –/भाषा ही रही है निशाने पर/निरीह गाय–सी भाषा..!'

**संदर्भ ग्रंथ सूची**

1. *'भारतीय चिंतन परम्परा', के. दामोदरन, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड, नई दिल्ली, 2009*
2. *'भारत एक खोज', जवाहरलाल नेहरू, श्याम बेनेगल द्वारा निर्देशित टीवी धारावाहिक, प्रसार भारती, नई दिल्ली, 1988.*
3. *'भारतीय परम्परा की खोज', भगवान सिंह, सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011.*
4. *'महात्मा गांधी के विचार', आर. के. प्रभू और यू. आर. राव, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, 2002.*
5. *'महात्मा – लाइफ ऑफ् मोहनदास करमचंद गांधी' वोल्यूम 1 से 8, डी. जी. तेन्दुलकर, http://www.mkgandhi.org, 2017*
6. *'मैं एक हरिण और तुम इंसान', सुरेंद्र डी. सोनी, बोधि प्रकाशन, जयपुर, 2013.*
7. *'रामकथा–उत्पत्ति विकासविकास, कामिल बुल्के, हिन्दी परिषद्,प्रयाग विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, 1997.*
8. *'राष्ट्रवाद बनाम देशभक्ति',आशिष नंदी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005.*
9. *'राष्ट्रीय साहित्य एवं अन्य निबंध', नंददुलारे वाजपेयी, विद्यामंदिर, वाराणसी, 1965.*
10. *'संस्कृति के चार अध्याय', रामधारी सिंह दिनकर, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2013.*
11. *'सत्यार्थ प्रकाश',महर्षि दयानंद सरस्वती, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दिल्ली, 2004.*
12. *'हिन्दी भाषा की आर्थी–संरचना',भोलानाथ तिवारी, किरण बाला,साहित्य सहकार न्यास,नई दिल्ली, 1984.*
13. *हिन्दी भाषा का अंतरराष्ट्रीय संदर्भ', भोलानाथ तिवारी, पांडुलिपि प्रकाशन, नई दिल्ली, 1987.*
14. *'हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ, नगेंद्र, मयूर पेपर बैक्स, नोएडा, 2005ण*